से संकलित किया जिसमें तीन भाग हैं–साखी, सबद, रमैनी।

संवत् 1575 विक्रमी में मगहर में इनकी मृत्यु हो गई। इनकी मृत्यु पर दाह संस्कार को लेकर हिन्दुओं और मुसलमानों में विवाद खड़ा हो गया। लोकविचार है कि इस झगड़े के समय कबीर का मृत शरीर लुप्त हो गया और सिर्फ फूल रह गए।

'अरे इन दोउन राह न पाई
हिन्दुअन की हिन्दुआई देखी तुरकन की तुरकाई'

ऐसा प्रहार करने वाले कबीर की वाणी में जबरदस्त निर्भीक शक्ति थी। खड़ी बोली, पंजाबी, अवधी, भोजपुरी के शब्दों से युक्त, अनुभवों-निड़रता-अखड़ता के स्वरों के संगुफंन से बनी अपनी भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था। 'वाणी के डिक्टेटर' कबीर की भाषा को 'पंचमेल खिचड़ी' या 'सधुक्कड़ी भाषा' कहा जाता है।

वस्तुतः कबीर सभी मत-मतांतरों से परे समन्वयवादी, मानवतावादी थे।

Scanned with CamScanner

कबीर निर्भीक, उदार, सत्यवादी, अहिंसा के पुजारी, बाह्याडम्बर विरोधी, क्रांतिकारी, मानवता के पक्षधर और समाज-सुधारक थे। वे तत्कालीन शासक सिकन्दर लोधी के आगे नहीं झुके। कट्टर हिन्दू-मुसलमान न उन्हें खरीद सके न तोड़ सके। कबीर ने अपने युग में धर्म-पंथियों को टकराहट देखी अतः सच्चे संत का साहित्यकार का फर्ज निभाते हुए उन्होंने अपने काव्य में हिन्दू-मुस्लिम एकता का स्वर उठाया। उन्होंने हिन्दू-मुसलमानों के बाह्याडम्बरों की निंदा करते हुए निराकारोपासना और मानवता पर बल दिया। उनकी दृष्टि में कोढ़ी और कुंजर में भेद न था तो वे हिन्दू-मुस्लिम ब्राह्मण, शूद्र आदि में भेद कैसे स्वीकार सकते थे। अतः भेदभाव को बदलने के लिए उन्होंने भक्ति का आलम्बन लिया है। उनके गुरु रामानंद कहते हैं–

''जाति पाति पूछै नहीं कोई
हरि को भजै सो हरि का होई''

इसी तर्ज पर कबीर कहते थे–

''जाति न पूछिए साधू की पूछ लीजिए ज्ञान''

हिन्दुओं को वे मूर्ति-पूजा, मुंडन, माला-जाप, तिलक-छाप, तीर्थाटन, नदी नदी-स्नान आदि बाह्य आडम्बरों से बचने तथा मुस्लिमों को जोरदार बाँग देने, हिंसा करने, रोजा रखने, दिखावटी नमाज पढ़ने आदि से बचने की बात करते हुए निर्गुण ब्रह्म के सूक्ष्म रूप का स्वरूप स्पष्ट करते हुए कहते हैं–

''जाके मुँह नहीं माहीं रूप कुरूप
पुहुप बास ते पातरा ऐसा तत्र अनूप''

कबीर निर्गुण ब्रह्म की उपासना करने के लिए बाह्याडम्बरों की अपेक्षा सहज समाधि पर बल देते हैं।

कबीरदास निर्गुण संत हैं पर उनकी निर्गुणता नीरस नहीं सरस थी। वे साधु होकर भी अगृहस्थ, वैष्णव होकर भी वैष्णव न थे, योगी होकर भी योगी न थे। उनकी भक्ति-साधना ने राम-नाम का अवलम्ब दिया जिससे सभी रसमग्न हो गए। कबीर की भक्ति-भावना पर रामचन्द्र शुक्ल कहते हैं कि ''उन्होंने भारतीय ब्रह्मवाद के साथ सूफियों के भावात्मक रहस्यवाद, हठयोगियों के साधनात्मक रहस्यवाद और वैष्णवों के अहिंसावाद तथा प्रपत्तिवाद का

मेल करके अपना पंथा खड़ा किया।''

कबीर अद्वैतवादी थे अतः उनके लिए आत्मा-परमात्मा में कोई भेद नहीं है। वे कहते हैं–

''कस्तूरी कुंडली बसै मृग ढूंढे बन माहीं
ऐसे घट घट राम हैं दुनिया जानत नाहीं''

अपनी उलटबासियों द्वारा कुण्डलिनी जागरण, अनहद नाद, षटचक्र भेदन, अजपाजाप के रहस्यवादी स्वर भी उनकी अद्वैतवादी, हठयोगी साधना के ही स्वर हैं।

हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार ''वे तो मस्तमौला, स्वभाव से फक्कड़, आदत से अक्खड़, भक्त के सामने निरीह, भेषधारी के आगे प्रचण्ड, दिल से साफ और दिमाग से दुरुस्त, भीतर से कोमल, बाहर से कठोर, जन्म से अस्पृश्य, कर्म से वंदनीय थे।'' कबीर को अक्षर (वर्ण) ज्ञान नहीं था पर अक्षर (ईश्वर) ज्ञान था इसलिए 'मसि कागद छुयो नहिं कलम गही नहीं हाथ' वाले कबीर बड़े से बड़े पोंगे पंडित से शास्त्रार्थ करने से भी नहीं चूकते दिखते हैं–

तू ब्राह्मण! हौं कासी का जोलाहा
चीन्ह न मोर तू गियाना।

कबीर का साहित्य से कोई विशेष संबंध ही नहीं था। वे स्वयं कहते हैं–

''विद्या न पढ़ूं वाद नहीं जानूं''

इसलिए कबीर साहित्य, वाद आदि के झमेले नहीं फँसे हुए हैं उनका ज्ञान तो उनका आँखों देखा, अनुभवी ज्ञान है। वे साहित्य के विद्वानों से, वेद ज्ञान के पुजारियों से कहते हैं–

''तू कहता कागद की लेखी मैं कहता आँखन की देखी''

डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत के शब्दों में ''उनकी रचनाओं से स्पष्ट है कि उन्हें साहित्य शास्त्र और काव्य का थोड़ा-सा भी ज्ञान ना था। हाँ, जहाँ तक धार्मिक साहित्य का संबंध है, कबीर ने उसका मनन किया था स्वयं पढ़कर नहीं, दूसरों से सुनकर।''

कबीर के शिष्यों ने उनकी वाणी, विचार और अनुभवों को 'बीजक' नाम

Scanned with CamScanner

1. कबीरदास

बहुआयामी व्यक्तित्त्व के धनी, दार्शनिक, भक्त, साधक, समाज-सुधारक मानवतावादी, विद्वान, ज्ञानी, निर्गुणोपासक संत कबीर भक्तिकाल की निर्गुण काव्यधारा की कोटि में सर्वोच्च स्थान रखते हैं। कबीर के जीवन के संबंध में बहुत मतभेद और किंवदंतियाँ प्रख्यात हैं। ग्रंथावली में व्यक्त 'चौदह सौ पचपन साल भये' के आधार पर इनका जन्म संवत् 1455 विक्रमी में काशी में माना जाता है। काशी के स्वामी रामानंद का एक भक्त ब्राह्मण था जिसकी विधवा कन्या को स्वामी ने पुत्रवती होने का आशीर्वाद दिया था। परिणामस्वरूप कबीर का जन्म हुआ। लोक-लाजवश यह ब्राह्मणी कबीर को लहरतारा तालाब के निकट फेंक आई थी जिसे बाद में नीरू-नीमा नामक जुलाहे ने पाल-पोसकर बड़ा किया।

डॉ० पुरूषोत्तम अग्रवाल ने अपनी पुस्तक 'अकथ कहानी प्रेम की' में उक्त किंवदंती को तोड़ते हुए माना कि कबीर ब्राह्मणी के गर्भ से नहीं जन्मे अपितु वे जन्म से ही जुलाहा थे, निम्नजाति के थे।

कबीर के गुरू के संबंध में भी विवाद है कुछ विद्वान रामानंद को इनका गुरू मानते हैं तो कुछ शेख तकी को। पर रामानंद के बारह शिष्यों में सर्वोच्च नाम कबीर का ही है।

कबीर गृहस्थ थे इनकी पत्नी का नाम लोई था। इनके एक पुत्र कमाल था और एक पुत्री कमाली थी। फक्कड़ स्वभाव होने के कारण कबीर को गृहस्थ धर्म रोक न सका। उनका मानना था–

'आई मौज फ़कीर की दिया झोंपड़ा फूंक'

यायावर घुमक्कड़ कबीर ने अनुभव और ज्ञान का संचय किया उन्होंने भक्ति, ज्ञान, साधना और अनुभव की भट्टी में अपने को पकाया तब जाकर-

'अपना मस्तक काटकर वीर हुआ कबीर।'

Scanned with CamScanner